The Academic
International Journal of Multidisciplinary Research

An Online Peer Reviewed / Refereed Journal
Volume 4 | Issue 7 | July 2026
ISSN: 2583-973X (Online), SJIF IF(2026): 5.6
Website: www.theacademic.in

वैदिक संहिताओं का चतुर्धा स्वरूप

डॉ0 सन्दीप कुमार मिश्र

सहायकाचार्य, संस्कृत विभाग, किसान स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बहराइच

email- sandeep@kisanpgcollege.ac.in

DOI : https://doi.org/ 10.5281/zenodo.22096780

ARTICLE DETAILS

Research Paper

Received: 22-06-2026

Accepted: 15-07-2026

Published: 21-08-2026

Keywords:

वेद, मन्त्र, वैदिक मन्त्रों का वर्गीकरण, चतुर्धा संहिता ।

ABSTRACT

वैदिक युग में वेद को वाङ्मय का पर्यायवाची शब्द माना जाता था। भारतीय ज्ञान परम्परा का उत्स वेद ही हैं। जिस प्रकार 'शास्त्र' शब्द अपने व्युत्पत्तिलभ्य अर्थ अथवा अपने विशिष्ट अर्थ को छोड़कर अपने से पूर्व में लगे हुए शब्द यथा धर्मशास्त्र, अर्थशास्त्र, व्याकरणशास्त्र में धर्म, अर्थ, व्याकरण को ही द्योतित करता है, उसी प्रकार 'वेद' शब्द प्राचीन समय में सम्पूर्ण वाङ्मय के लिए प्रयुक्त होता था। जैसे ब्राह्मण युग में लिखा गया सम्पूर्ण साहित्य ब्राह्मणग्रन्थों के नाम से, स्मृतियुग में लिखे गये सभी ग्रन्थ स्मृतिग्रन्थों के नाम से, सूत्र युग में लिखे गये सभी ग्रन्थ सूत्रग्रन्थों के नाम से तथा पौराणिक युग में लिखे गये सभी ग्रन्थ पुराणों के नाम से अभिहित हुए उसी प्रकार वैदिक युग में 'वेद' शब्द के अन्तर्गत ब्राह्मणग्रन्थों तक का समावेश किया गया। 'मन्त्रब्राह्मणयोर्वेदनामधेयम्'[1] के अनुसार मन्त्र और ब्राह्मण दोनों का नाम वेद है। इन्हीं से ही सर्ववेद, पिशाचवेद, असुरवेद, इतिहासवेद तथा पुराणवेद निर्मित हुए–'ताभ्यः पंचमवेदन्निरमियतसर्ववेदं पिशाचवेदमसुरवेदमितिहासवेदंपुराणवेदमिति'। प्रस्तुत लेख में वेद शब्द की व्युत्पत्ति से लेकर वेद मन्त्रों के वर्गीकरण तथा संहिताओं के चतुर्धा विभाजन का विस्तृत विवेचन किया जायेगा।

वेद शब्द की व्युत्पत्ति पर संहिताओं से लेकर उपनिषद्, आयुर्वेद, नाट्यशास्त्र, कोश, कल्प और मनुस्मृति आदि ग्रन्थों में व्यापक रूप से प्रकाश डाला गया है। वेद शब्द चार धातुओं से निष्पन्न होता है–विद्ज्ञाने, विद्सत्तायाम्, विदलृ लाभे और विद् विचारणे। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने वेद शब्द का निर्वचन करते हुए कहते हैं–**'विदन्ति जानन्ति,विद्यन्ते भवन्ति,विन्दन्ति विन्दन्ते लभन्ते,विन्दते विचारयन्ति सर्वे मनुष्याः सर्वाः सत्यविद्या यैर्येषु वा तथा विद्वांसश्च भवन्ति ते वेदाः'**[2]

Disclaimer: The opinions, interpretations, conclusions, recommendations, analyses, and statements expressed in this research article are solely those of the author(s) and do not reflect the views, policies, or positions of the Publisher, Chief Editor, Editors, Editorial Board, Reviewers, or their affiliated institutions. The author(s) are solely responsible for ensuring the originality, authenticity, and integrity of the manuscript and for ensuring that it is free from plagiarism, AI-generated content, copyright infringement, data falsification, and any other form of academic misconduct.

अर्थात् जिनको पढ़ने से यथार्थ विद्या का ज्ञान होता है,जिनको पढ़ने से विद्वान् होते हैं,जिनसे सब सुखों का लाभ होता है और जिनसे ठीक–ठाक सत्यासत्य का विचार मनुष्य को होता है ऐसी ऋक्संहितादि का नाम 'वेद' है। वस्तुतः वेद शब्द ज्ञान अर्थ का परिचायक है किन्तु यह इतिहास, भूगोल, गणित आदि के ज्ञान से सम्बन्धित नहीं है अपितु यहाँ ऋषियों मुनियों द्वारा दृष्ट ज्ञान ही अभिप्रेत है। यह ज्ञान मन्त्रों के माध्यम से अभिव्यक्त हुआ है। ऋषियों ने ईश्वरीय ज्ञान का जिन शब्द नियमों या वाक्य समूहों में साक्षात्कार किया उन्हीं समूहों की उपाधि का नाम मन्त्र है। ये तीन है–ज्ञानार्थक, विचारार्थक और सत्कारार्थक। यदि हम 'मन्त्र' शब्द के व्युत्पत्तिलभ्य अर्थ पर विचार करें तो पता चलता है कि इसकी तीन प्रकार से व्युत्पत्ति की जा सकती है पहली–दिवादिगण की ज्ञानार्थक मन् धातु में ष्ट्रन् प्रत्यय जोड़कर, जिसका अर्थ होता है–ईश्वरीय आदेशों की जानकारी जिनसे प्राप्त हो वह 'मन्त्र' हैं। इस प्रकार वेद ईश्वरीय आदेश हैं। दूसरी–तनादिगणीय मन् धातु में ष्ट्रन् प्रत्यय जोड़कर, जिसका अर्थ है–जिसमें ईश्वरीय आदेशों का सम्यक् विचार हो, चिन्तन, मनन हो वे 'मन्त्र' हैं। तीसरी व्युत्पत्ति–तनादिगणीय सत्कारार्थक मन् धातु से ही ष्ट्रन् प्रत्यय जोड़कर, जिसका अर्थ होता है–जिसमें किसी देवता की सम्मानार्थक विधियाँ वर्णित हो वह 'मन्त्र' है। इस प्रकार यदि हम विचार करें तो हम पाते हैं कि मन्त्र शब्द की तीनों व्युत्पत्तियाँ उपयुक्त है क्योंकि मन्त्रों में ईश्वरीय आदेश भी हैं, चिन्तन–मनन भी है तथा विभिन्न देवताओं की स्तुतियाँ अथवा प्रार्थनाएँ भी मन्त्रों के माध्यम से ही की गयी हैं। इन व्याख्याओं से एक निष्कर्ष यह निकलता है कि वेदमन्त्र उन्हें कहते हैं जिनमें ईश्वरीयज्ञान का प्रतिपादन हो।

वेदमन्त्रों का वर्गीकरण

वेदमन्त्रों की संख्या सहस्रों होने के साथ–साथ विषय की दृष्टि से भी असमानताएँ हैं। प्राचीन समय में ही वेदमन्त्रों को संख्या तथा विषय की दृष्टि से क्रमबद्ध करते हुए तीन विभाग किये गये तथा तीनों विभागों का नामकरण किया गया–ऋच्, यजुस् और साम। इस विभाग का ही सामूहिक नाम 'त्रयी' हुआ। इनमें ऋच् शब्द प्रार्थना का पर्यायवाची है जिसकी व्युत्पत्ति है– ऋच्यते स्तूयते अनया इति ऋक् अर्थात् जो वैदिक देवताओं की स्तुति या प्रार्थना से सम्बन्धित हैं उन्हें ऋक् कहा गया। इस प्रकार इस वर्ग में उन मन्त्रों को रखा गया जो देवताओं की प्रार्थना से सम्बन्धित थे। ये मन्त्र गद्य तथा पद्य दोनों में थे किन्तु ऋक् के अन्तर्गत केवल पद्यात्मक मन्त्रों को ही रखा गया। छन्दोबद्ध मन्त्रों का ही दूसरा नाम 'ऋचा' है। मन्त्र शब्द का अर्थ है–गुप्तकथन। वेद का अर्थ है–ज्ञान तथा संहिता कहते हैं संग्रह को, अतः ऋग्वेद संहिता का अर्थ हुआ–उस देवविषयक अत्यन्त गूढ़ज्ञान का प्रतिपादन जो छन्दों में संगृहीत है।

इसी प्रकार यजुष् में ऐसे मन्त्रों का संग्रह किया गया जिसका विषय पूजा–पाठ था। यजुष् का व्याकरणसम्मत अर्थ है–यजति यजते वा अनेन इति अर्थात् जिन मन्त्रों में पूजा–अर्चना का विधान वर्णित किया गया हो वे 'यजुष्' कहलाते हैं। इसमें केवल गद्यात्मक मन्त्रों का ही संग्रह किया गया।

उपर्युक्त दोनों वर्गों में जिन मन्त्रों का अन्तर्भाव नहीं किया जा सका उन्हें 'सामन्' के अन्तर्गत रख गया। सामन् शब्द का अर्थ है–'स्यति नाशयति विघ्नं इति सामन्' अर्थात् यज्ञों के समय विघ्नों के नाश हेतु जिन मन्त्रों का गान होता है वे सामन् है इसके अतिरिक्त एक अन्य व्युत्पत्ति के अनुसार 'समयति सन्तोषयति देवान् अनेन इति सामन्' अर्थात् जिनके

द्वारा देवताओं को प्रसन्न करने की कामना की जाती है वे सामन् हैं। ऐसा अर्थ निकलता है। इस प्रकार ये सामन् मन्त्र स्वर–लय–ताल से बद्ध होने के कारण गेयात्मक हैं। इस प्रकार वैदिक मन्त्रों के त्रिधा विभाजन के पश्चात् तीन मन्त्र संहिताएँ आविर्भूत हुई–ऋग्वेद संहिता,यजुर्वेद संहिता तथा सामवेद संहिता। इस त्रिधा विभाजन के सम्बन्ध में मनुस्मृति में कहा गया है कि–

अग्निवायुरविभ्यस्तु त्रयं ब्रह्म सनातनम्।

दुदोह यज्ञसिद्ध्यर्थमृग्यजुस्सामलक्षणम्।।[3]

अर्थात् परमात्मा ने यज्ञ की सिद्धि के लिए ऋक्,यजुष् और साम इन तीन लक्षण वाले सनातन वेदों को अग्नि, वायु और सूर्य के लिए प्रकट किया। किन्तु शतपथ ब्राह्मण में मिलता है कि–तेभ्यस्तप्तेभ्यस्त्रयो वेदा अजायन्त। अग्नेः ऋग्वेदो, वायोर्यजुर्वेदः सूर्यात्सामवेदः। अर्थात् अग्नि,वायु और सूर्य ने तपस्या करके स्वयं ही ऋक् यजु और साम इन तीनों वेदों को उत्पन्न किया।[4] आगे चलकर इसी वेदत्रयी का चतुर्धा वर्गीकरण हुआ जिससे 'अथर्ववेद संहिता' का आविर्भाव हुआ। ऐसे मन्त्र जो वेदत्रयी में समन्वित नहीं हुए वे अथर्ववेद में समाहित हुए। किन्तु इसका तात्पर्य यह नहीं है कि अथर्व वेदत्रयी जितना सनातन नहीं है। वेदों के चतुर्धा विभाजन का उल्लेख यजुर्वेद में ही प्राप्त होता है–

तस्माद्यज्ञात् सर्वहुतऋचः सामानि जज्ञिरे।

छन्दांसि जज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायत।।[5]

इसी प्रकार अथर्ववेद में ही चारों वेदों के अस्तित्त्व की बात आयी है–

यस्माद्यऋचो अपातक्षन् यजुर्यस्मादपाकषन्।

सामानि यस्य लोमान्यथर्वांगिरसो मुखम्।।[6]

यदि हम उक्त विवेचन को देखें तो पता चलता है कि वेदों के चतुर्धा विभाजन में प्राचीन काल से ही अनेक मत रहे हैं। निरुक्त के टीकाकार दुर्गाचार्य के अनुसार वेद मूलतः एक ही था उनके मन्त्रों के गूढार्थ को सुगम बनाने के लिए उन्हें शाखाओं में विभक्त किया गया। तैत्तिरीय संहिता के भाष्य में भास्कर भट्ट ने लिखा है–आरम्भ में सभी वेदमन्त्र एक साथ ही थे बाद में उन्हें जनकल्याणार्थ विभाजित किया गया। इन भाष्यकारों के अनुसार तो यह निष्कर्ष निकलता है कि वेदों के सभी मन्त्र एक साथ ही मिले जुले थे किसी वेद के पूर्वापर होने का प्रश्न ही नहीं उठता है। किन्तु भाष्यकार महीधर ने अपने यजुर्वेद भाष्य में कहा है कि ब्रह्मा से वेदों की जो परम्परा चली आ रही थी उसी को ग्रहण करके वेदव्यास ने मन्दमति लोगों के लिए वेदों का चतुर्धा विभाजन कर दिया। विष्णुपुराण के अनुसार वेद आरम्भ से ही चार थे। प्रत्येक द्वापर के अन्त में चारों संहिताओं को पुनः चार भागों में विभाजित किया गया इस प्रकार अब तक 28 बार

विभाजन हो चुका है और प्रत्येक विभाजन करने वाले के हिसाब से 28 व्यास हो चुके हैं।[7] यही बात मत्स्य पुराण में भी कही गयी है।[8]

इस प्रकार यदि हम देखें तो दो मत स्पष्ट हो जाते हैं पहला कि वेद मन्त्र मिले जुले थे उन्हें बाद में विभाजित किया गया तथा दूसरा कि वेद पहले से ही चतुर्धा विभाजित थे। इनमे यदि हम पुराणों को हटा दे तो अधिकांश मत आरम्भ में वेदों के आरम्भ में ही चतुर्धा होने के हैं। अथर्ववेद के अन्य नाम जैसे अथर्वांगिरस, भृग्वांगिरस, ब्रह्मवेद और छन्दस् आदि नाम उसके विषय की व्यापकता को सूचित करते हैं। शतपथ ब्राह्मण में, तैत्तिरीय संहिता में, तैत्तिरीय आरण्यक में और श्रौतसूत्रों में भी अथर्ववेद की स्थिति अन्य तीनों वेदों के समान ही मानी गयी है। मीमांसा सूत्र में वेद के विधि वाक्यों को मन्त्र कहा गया है[9] तथा मन्त्र को छोड़कर शेष भाग ब्राह्मण कहलाता है।[10] जिन मन्त्रों में अर्थ के वश चरण की व्यवस्था हो उन्हें ऋक्,[11] गीतों को साम[12] शेष मन्त्र यजु कहे गये।[13] ये तीनों प्रकार के मन्त्र चारों वेदों में प्राप्त होते हैं। जिससे वेदों की एकरूपता प्रमाणित हो जाती है।

निष्कर्ष– वैदिकज्ञान की जो विरासत आज उपलब्ध है वह वस्तुतः एक व्यक्ति, परम्परा, मस्तिष्क आदि की न होकर अनेक शताब्दियों की देन है। यह एक सामूहिक एवं सुदीर्घकाल में निर्मित विचारधारा है जो समय स्थान और व्यक्ति के अनुसार कभी शिथिल तो कभी चरम पर रही। अनेक युगों से परम्परा से आये हुए ज्ञान को हमारी आर्ष परम्परा ने वेदरूपी धर्म के रूप में साक्षात्कार किया फलस्वरूप अपने बाद के ऋषियों को वेदमन्त्रों का उपदेश किया तथा उन्हीं वैदिक संहिताओं का वही सर्वसम्मत चतुर्धा स्वरूप आज हमारे सम्मुख विद्यमान है।

सन्दर्भ

1. आपस्तम्बयज्ञ परिभाषा सूत्र –1.3.3.1
2. ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका–वेदोत्पत्तिविषयः पृ0 35, सम्पादक– सरस्वती, स्वामी सम्पूर्णानन्द, सिद्धयोग पीठ ट्रस्ट, 2008
3. मनुस्मृति 1/23
4. शतपथ ब्राह्मण 11.5.8.1
5. ऋग्वेद पुरुषसूक्त 10.90.9
6. अथर्ववेद काण्ड 10.23.4.20
7. विष्णुपुराण–3.3.19–20
8. मत्स्य पुराण–144/11
9. मीमांसा सूत्र 2.1.32
10. तदेव 2.1.33
11. तदेव 2.1.35
12. तदेव 2.1.36
13. तदेव 2.1.37